इकाई 11 धार्मिक बहुलतावाद एवं पंथनिरपेक्षतावाद*

रूपरेखा

11.0 उद्देश्य

11.1 परिचय

11.2 धार्मिक बहुलतावाद को बढ़ावा देने वाली अथवा कम करने वाली परिस्थितियां

11.3 धार्मिक बहुलतावाद के प्रति दार्शनिक प्रतिक्रिया

11.4 धार्मिक बहुलतावाद के प्रति व्यावहारिक प्रतिक्रिया

11.5 सारांश

11.6 कुंजी शब्द

11.7 अन्य सहायक अध्ययन—सामग्री एवं सन्दर्भ

11.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

11.0 उद्देश्य

पिछली शताब्दी के मध्य तक धर्म—दर्शन, जैसा कि यह पाश्चात्य जगत में समझा जाता है, ईसाईयत की अद्वितीयता मानी जाते थी, और धर्म सम्बन्धी दार्शनिक विचार ईसाई धर्म के

---

* ऑगस्टीन पेरुमलिल, सत्य निलयम, मुखथल।

' पंथनिरपेक्षतावाद' अनुभाग के लेखक डॉ. आशुतोष व्यास, परामर्शदाता (दर्शनशास्त्र), एसओआईटीएस, इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय हैं।

अनुवाद (अनुभाग – बहुलतावाद)— डॉ. विजय कुमार, सहायक प्राध्यापक, दर्शन विभाग, श्यामा प्रसाद मुखर्जी महिला महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय।

अनुवाद (अनुभाग – पंथनिरपेक्षतावाद)— डॉ. आशुतोष व्यास, परामर्शदाता (दर्शनशास्त्र), एसओआईटीएस, इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय।

इर्द–गिर्द केन्द्रित थे और उन दार्शनिक विचारों ने मुख्यतः ईसाई (या जूडो–ईसाई) धर्म के ईश्वर के विचार पर ध्यान केन्द्रित किया। यद्यपि पिछली शताब्दी में धर्म दार्शनिकों ने यह अनुभव किया कि विश्व में अन्य धर्म भी हैं और ऐकेश्वरवाद उनमें से एक है। परिणाम स्वरूप, धर्म दार्शनिक अपने चिन्तन में अब विभिन्न धार्मिक आस्थाओं से सम्बन्धित समस्याओं को सम्मिलित करते हैं। इस इकाई का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थियों का ध्यान धार्मिक बहुलतावाद की ओर आकर्षित करना है। इसकी शुरूआत धार्मिक बहुलतावाद को परिभाषित करके इसका धर्मों की विविधता से अन्तर करके, और उन शर्तों का परीक्षण करके जो धार्मिक बहुलतावाद को विस्तारित अथवा अविस्तारित करती है, होती है। फिर, यह परीक्षण धार्मिक बहुलतावाद से सम्बन्धित दार्शनिक और व्यावहारिक प्रश्नों का उत्तर प्रस्तुत करने से आगे बढ़ता है।

अतः इकाई के अन्त तक छात्र योग्य हो जाएंगे;

- धार्मिक बहुलतावाद एवं इसके द्वारा उठाई गयी समस्याओं की आधारभूत समझ ग्रहण करने के;
- विभिन्नता के प्रति सहिष्णु होने एवं प्रशंसा करने के;
- धार्मिक बहुलतावाद को विस्तारित अथवा अविस्तारित करने वाली परिस्थितियों को समझने के;
- भूतकाल में दार्शनिकों द्वारा प्रस्तुत विभिन्न समाधानों का मूल्यांकन करने के; और धर्म सम्बन्धी विभिन्नता के प्रति जागरुक होने के फलस्वरूप उत्पन्न समस्याओं के नये समाधान प्रस्तुत करने के।

11.1 परिचय

कुछ दार्शनिक धार्मिक बहुलता और धार्मिक बहुलतावाद के मध्य अन्तर करते हैं। वे प्रथम को धार्मिक विविधता के तथ्य के रूप में परिभाषित करते हैं और द्वितीय को इस तथ्य की पहचान और स्वीकृति के रूप में स्वीकार करते हैं। यह परिभाषा यद्यपि वैध है किन्तु धार्मिक "बहुलतावाद" के अर्थ को पूर्णतः अभिव्यक्त नहीं करती है। वस्तुतः धार्मिक बहुलतावाद विभिन्न

सम्बन्धित अर्थों में प्रयोग किया जाता है। कुछ विचारक धार्मिक बहुलतावाद को इस अर्थ में लेते हैं कि यह एक ऐसा दृष्टिकोण है जिसके अनुसार कोई भी एक धर्म सत्य का एक मात्र स्रोत नहीं है और अन्य धर्मों में भी कम से कम कुछ सत्य अवश्य है। धार्मिक बहुलतावाद की एक अन्य परिभाषा को मानने वाले अन्य धर्मों के सत्य विश्वासों को अपने धर्म के सत्य विश्वासों के विपरीत होने पर भी सत्य मानते हैं। यह दृष्टि सभी धर्मों के एक दूसरे के विपरीत विश्वासों के उपरान्त भी वैध है। धार्मिक बहुलतावाद की व्यापक परिभाषा अपने प्राथमिक अर्थ में केवल बहुलता की तथ्यात्मकता को ही सम्मिलित नहीं करती है और सभी धर्मों की वैधता को ही स्वीकृति नहीं देती है, बल्कि साथ ही यह अन्तः धार्मिक सम्वाद और सहयोग के रूप में बहुलता के साथ सक्रिय कार्यवाही पर भी बल देती है। डाइना इक के अनुसार, "बहुलतावाद केवल बहुलता सम्बन्धी तथ्य नहीं है वरन् बहुलता के साथ एक सक्रिय अनुबंध है। बहुलतावाद तथा बहुलता को कभी–कभी एक दूसरे के पर्याय के रूप में भी समझा जाता है। परन्तु बहुलता केवल साधारण और सरल, उत्कृष्ट, रंग–बिरंगी और कभी–कभी चुनौती पूर्ण विविधता है। यद्यपि, ऐसी विविधता, को मुझे प्रभावित करना आवश्यक नहीं है। मैं विविधता का अनुभव कर सकता हूँ। मैं विविधता की प्रशंसा भी कर सकता हूँ। किन्तु मुझे बहुलतावाद में भाग लेना चाहिए... " बहुलतावाद को एक ऐसा साझा क्षेत्र तैयार करना चाहिए जहाँ न केवल अन्य धर्मों की वैधता की स्वीकृति हो बल्कि धर्मों के मध्य सम्वाद भी होता हो। जहाँ विभिन्न धर्मों के व्यक्ति धार्मिक विश्वासों पर विचार–विमर्श करते हैं और एक दूसरे के साथ मिलकर बिना एक दूसरे को, उनके विचारों की असत्यता दिखा कर अपने विचारों से सहमत किए हुए कार्य करते हैं और उनसे सीखते हैं।

बोध प्रश्न I

ध्यातव्य : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का उपयोग कीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कीजिए।

1. धार्मिकता बहुलता और धार्मिक बहुलतावाद के मध्य अन्तर कीजिए।

....

....

....

....

11.2 धार्मिक बहुलतावाद को बढ़ावा देने वालीं अथवा बाधित करने वालीं परिस्थितियां/शर्तें

11.2.1 धार्मिक बहुलता के अस्तित्व के लिए परिस्थितियां/शर्तें

धार्मिक बहुलतावाद के अस्तित्व के लिए आवश्यक शर्त है धर्म की स्वतन्त्रता का होना। धार्मिक विविधिता केवल धर्म की स्वतन्त्रता में ही फल–फूल सकती है। धर्म की स्वन्त्रता के लिए यह आवश्यक नहीं है कि कोई विशेष धर्म यह स्वीकार करें कि अन्य धर्म वैध हैं अथवा धर्म की स्वतन्त्रता और धार्मिक बहुलता सामान्यत अच्छी बात है। आवश्यक यह है कि धर्म एक दूसरे के साथ सह अस्तित्व में रहें, सामूहिक रूप से किसी विशेष क्षेत्र के कानून को स्वीकार करते हुए क्रिया करें। धर्म की स्वतन्त्रता तब होती है जब किसी क्षेत्र विशेष के विभिन्न धर्मों को पूजा करने और अपने विचारों को अभिव्यक्त करने के समान अधिकार मिले हों। कुछ विद्वानों का कहना है कि धार्मिक बहुलतावाद के अस्तित्व के लिए अकेले धार्मिक स्वतन्त्रता का होना पर्याप्त नहीं है। इसके लिए विभिन्न धर्मों के मध्य परस्पर सम्मान का होना आवश्यक है। ऐसे एक समान सम्मान को बढ़ावा देने के लिए विभिन्न धर्मों के मध्य के विरोधों को और एक धर्म के अन्दर विभिन्न प्रकार के प्रभुत्वों को समाप्त करने के उद्देश्य से सामाजिक और धार्मिक परिवर्तन करने चाहिए। इस प्रकार का परिवर्तन किसी धर्म के अक्षरशः दृष्टिकोण को नकार कर और स्तरीय प्रकरणों की अपेक्षा आधारभूत सिद्धान्तों पर जोर देकर किया जा सकता है। यह मूलतः वह प्रवृत्ति है जो महत्वहीन मतान्तरों पर ध्यान नहीं देती है और इसकी अपेक्षा सामान्य विश्वासों को महत्व प्रदान करती है। स्पष्ट है कि ऐसे परस्पर सम्मान और सहयोग के परिवेश में ही धार्मिक बहुलतावाद फल–फूल सकता है।

11.2.2 धार्मिक बहुलतावाद को बाधित करने वाली परिस्थितियां/शर्तें

धार्मिक स्वतन्त्रता तथा अन्य धर्मों के प्रति सम्मान धार्मिक बहुलता को बढ़ावा देता है और धार्मिक स्वतन्त्रता का नहीं होना धार्मिक बहुलता पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। निरीश्वरवादी समाज में धार्मिक बहुलतावाद नहीं रह सकता क्योंकि ऐसे देशों में धर्म के लिए कोई स्थान नहीं है।

विशिष्टतावाद (exclusive) भी धार्मिक बहुलता का ह्रास करता है। विशिष्टतावादी धर्म यह दावा करता है कि सत्य एवं मोक्ष प्राप्त करने का एक ही रास्ता है। कुछ विशिष्टातावादी धर्म अन्य धर्मों के विश्वासों को हीन मानते हुए उनके विरुद्ध युद्ध/प्रचार करने का भी परामर्श देते हैं। कुछ कट्टरवादी समूह जैसे कि तालिबान अन्य धर्मों के विरुद्ध घातक ढंग से प्रचार करते हैं और तर्क करते हैं कि उदारवादी मुस्लिम और अन्य धर्मों को समाप्त हो जाना चाहिए। यह प्रवृत्ति ही धर्म युद्धों और प्रारम्भिक आधुनिक काल के धार्मिक शोषणों का कारण बनी। विशिष्टतावादी धर्म अन्य धर्मों में कोई अच्छाई नहीं देखता और उनके प्रति असहिष्णु होता है। स्पष्ट है, जहां कहीं भी ऐसी परिस्थिति होगी वहां धार्मिक बहुलतावाद नहीं हो सकता।

विशिष्टतावाद का उदारवादी रूप एक धर्म को महत्व देता है तथा अन्य धर्मों को समान अधिकार प्रदान नहीं करता है। यद्यपि, यह कुछ कम घातक स्थिति है किन्तु ऐसी वरीयता के परिवेश में धार्मिक बहुलतावाद में बाधा उत्पन्न होती है।

11.3 धार्मिक बहुलतावाद के प्रति दार्शनिक प्रतिक्रिया

11.3.1 धार्मिक प्रत्ययों का विश्लेषण

धार्मिक बहुलतावाद के प्रति एक आरम्भिक उत्तर अपने धर्म से इतर धर्म के धार्मिक प्रत्ययों का अध्ययन करना था। इसने तुलनात्मक धर्मशास्त्र/धर्ममीमांसा नाम की दार्शनिक परम्परा को जन्म दिया। तुलनात्मक धर्म धार्मिक अध्ययन की वह शाखा है जो विश्व के विभिन्न धर्मों के मिथकों, कर्मकाण्डों तथा मान्यताओं के मध्य समानताओं और विभिन्नताओं का विश्लेषण करती है। तुलनात्मक धर्मशास्त्र के क्षेत्र में विश्व के मुख्य धर्म सामान्यतः अब्राहमवादी भारतीय अथवा

ताओवादी में वर्गीकृत किये जाते हैं, और इन धर्मों के विभिन्न समान पक्षों की समानताओं एवं विभिन्नताओं को विश्लेषित करने का प्रयास किया जाता है। अतः पूर्वी धर्मों के समन्वित रहस्यवाद के वर्णन को विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है। उदाहरणार्थ, हिन्दू और बौद्धवादी अवतार की अवधारणा, जीवन–दर–जीवन चलने वाली व्यक्तिगत तादात्म्यता के प्रश्न पर विचार बौद्ध धर्म के अनात्मवाद, शून्यता और अन्य महत्वपूर्ण विचार। यद्यपि अभी भी व्यक्तिगत एवं तुलनात्मक रूप से बहुत कार्य शेष हैं और अनेक अन्य प्रमुख विचारों पर ध्यान दिया जाना शेष है, वास्तव में दर्शन का यह क्षेत्र असीमित विकास की सम्भावनाएं लिए है।

11.3.2 धर्मों के मध्य सम्बन्ध पर विचार

धार्मिक बहुलतावाद का एक उत्तर विभिन्न धर्मों के मध्य सम्बन्धों पर विचार का प्रारम्भ करना था। यह धार्मिक बहुलतावाद के क्षेत्र में महत्वपूर्ण दार्शनिक प्रश्नों में से एक है, यद्यपि प्रकृतिवाद, जो धर्म को उसके समस्त रूपों सहित मानवीय आशा, भय, और आदर्शों के विश्व पर भ्रमपूर्ण प्रक्षेपण मानता है, इस समस्या को प्रच्छन्न (भ्रामक) समस्या मानता है। इस प्रश्न को गम्भीरता से लेने वाले लोग इस सम्बन्ध को दो भिन्न प्रारूपों में प्रस्तावित करते हैं– विशिष्टतावाद और बहुलतावाद।

11.3.2.1 विशिष्टतावाद

विशिष्टतावाद अपने धर्म को छोड़कर अन्य सभी धर्मों को असत्य मान कर निरस्त कर देता है। वस्तुतः इस विचार के अनुसार केवल एक ही धर्म (उनका अपना) सत्य हो सकता है। अन्य सभी धर्मों को अपने धर्म की तुलना में वे असत्य और भ्रमित मानकर निरस्त करते हैं। यह विचार सर्वाधिक स्वीकृत विचार है। प्रत्येक धर्म के समर्थक (सभी नहीं किन्तु कुछ अवश्य) कम से कम छुपे रूप से ही सही इस विचार को महत्व देते हैं।

यद्यपि ”सन्देह का व्याख्या शास्त्र” (hermeneutic of suspicion) इस स्पष्ट तथ्य को सिद्ध करता है कि व्यक्ति अपने धर्म को जन्म से धारण करता है। ईरान या इण्डोनेसिया में मुस्लिम परिवार में जन्मा व्यक्ति मुस्लिम, थाइलैण्ड या श्री लंका के बौद्ध परिवार में जन्मा व्यक्ति बौद्ध, इटली

या मैक्सिको के ईसाई परिवार में जन्म व्यक्ति ईसाई हो जाता है। अतः यह कहना कि वह धर्म जिसमें व्यक्ति जन्म लेता है वहीं एक मात्र सत्य धर्म है एक अतार्किक स्वैच्छिक दावा है और यदि यह कहा जाए कि मोक्ष एवं शाश्वत जीवन किसी भी व्यक्ति को केवल उसी के विशेष धर्म के माध्यम से प्राप्त हो सकता है असत्य है। इसी प्रकार यह कहना भी सत्य नहीं है कि मोक्ष दायी सत्य किसी विशेष धर्म के व्यक्तियों को ही प्राप्त होता है जबकि उस धर्म में कुछ भाग्यशाली व्यक्ति ही जन्म लिए होते हैं।

इस विचार का अनेक धर्मशास्त्रियों ने ईश्वर के पूर्वज्ञान के आधार पर खण्डन किया है। इस विचार के अनुसार, ईश्वर को पता होता है कि उसकी शिक्षाओं को प्राप्त करने के बाद भी सभी व्यक्ति उसे स्वीकार नहीं करेंगे। यह सुझाव, जिसे सभी धर्म स्वीकार करते हैं, वह विचार लेकर आता है जो अनेक व्यक्तियों के लिए धर्मशास्त्रीय रूप में आपत्तिजनक है। इस आपत्तिजनक विचार के अनुसार, ईश्वर ने अनेक ऐसे व्यक्ति उत्पन्न किए हैं जिन्हें ईश्वर जानता है कि मोक्ष प्राप्त होगा।

इस कठिनाई पर विजय प्राप्त करने के लिए सत्य को जानना और मोक्ष प्राप्त करना के मध्य अन्तर किया जाता है। यह तर्क दिया जाता है कि, उदाहरण के लिए, जो व्यक्ति इस जीवन में ईश्वरीय उपदेशों के सत्य को नहीं जान पाता है वह दैवीय कृपा से ईसाई धर्म के कथित मोक्ष को प्राप्त कर लेगा। ऐसे व्यक्तियों को "गुमनाम ईसाई" कहा जाता है। क्या यह किसी विशेष धर्म का स्वःघोषित विशेषाधिकार नहीं है? यदि सभी धर्म ऐसे ही दावे करने लगे तब ऐसे विवादों का हल करना असम्भव हो जाएगा।

11.3.2.2 बहुलतावाद

विशिष्टतावाद की समस्या से परेशान होकर अनेक समकालीन विचारक बहुलतावादी दृष्टिकोण को स्वीकार करते हैं। बहुलतावादी दृष्टिकोण इस विशिष्टतावादी दृष्टिकोण कि केवल कोई एक धर्म ही सत्य होता है और मोक्षदायी होता है के विपरीत यह स्वीकार करते हैं कि अन्य धर्म भी सत्य होते हैं और मोक्षदाता होते हैं प्रभावी बहुलतावादी दृष्टियां है; विविधता में एकता, धर्मों की सम्पूरकता और उग्र विविधता ।

धर्मों की अनुभवातीत एकताः बहुलतावाद का एक रूप यह दावा करता है कि विभिन्न ऐतिहासिक धर्म जैसे कि हिन्दू, ईस्लाम और ईसाई मूलतः एक केन्द्रिय सार्वभौमिक धर्म की अभिव्यक्तियां हैं। अतः फ्रिटजोफ शुआन, रेने गूवेनान, आनन्द कुमार स्वामी, सैयद हैसेन नासर और हुस्टन स्मिथ आदि द्वारा स्वीकृत बहुलतावाद रहस्यवादियों का गुप्त गर्म और आस्तिकों के बड़े समूह का स्पष्ट धर्म के मध्य अन्तर करता है तब यह दावा किया जाता है कि प्रथम, अपने अन्ततः रूप में, विभिन्न धर्मों में समान है जबकि द्वितीय सांस्कृतिक परिस्थिति जन्य प्रत्ययों, सिद्धान्तों, कल्पनाओं, जीवन रूपों और आध्यात्मिक व्यवहारों को सम्मिलित करने के कारण मतभिन्नता और वास्तव में कई बिन्दुओं परपरस्पर प्रतिस्पर्धा लेकर आता है। प्रत्येक धार्मिक परम्परा (ऐतिहासिक ईसाईयत, इस्लाम, हिन्दू तथा बौद्ध आदि) को अपनी विशिष्टता बनाए रखनी चाहिए क्योंकि इनमें से प्रत्येक रहस्यवादियों द्वारा प्रत्यक्ष रूप से ज्ञेय परम सत् की वैध अभिव्यक्ति है। इस प्रकार, ऐतिहासिक धर्म एक केन्द्रिय पक्ष की विभिन्न अभिव्यक्तियां है और सभी धर्म इस अनुभव के स्तर पर एक हैं।

यह विचार दो कठिनाइयों से ग्रसित है। प्रथम यह रहस्यवाद को धर्म का एकीकृत केन्द्र स्वीकार करके ऐतिहासिक अभिव्यक्तियों को सापेक्षिक बना देता है। दूसरी समस्या अधिक गम्भीर है। यह दावा कि रहस्यवादियों का गोपनीय धर्म सभी विभिन्न धर्मों में समान है तथ्यात्मक रूप से सन्तुष्टिप्रद नहीं है। तथ्य यह है कि रहस्यवादियों के विवरण अत्यन्त भिन्न होते हैं। जहां कुछ रहस्यवादी व्यक्तित्वसम्पन्न दैवीय सत् के साथ एकीकरण का अनुभव करते हैं वहीं अन्य अव्यक्तित्वसम्पन्न सत् से एकीकरण की बात करते हैं और फिर वे एकान्त अथवा आनन्दपूर्ण शून्यता का अनुभव करते हैं। अतः गोपनीय परम्पराओं में कोई एकता दिखाई नहीं पड़ती।

धर्मों की सम्पूरकताः धर्मों के मध्य सम्बन्ध की व्याख्या करते हुए निनिआन स्मार्ट और केथ वार्ड विश्व के धर्मों के मध्य सम्पूरकता पर बल देते हैं। वार्ड "एक परम सत् जो कि सभी को चेतन रूप से इसके साथ जुड़ने के लिए प्रेरित करता है के बारे में बात करते हैं। सत् का सम्पूरक पक्ष विभिन्न धर्मों में अभिव्यक्त होता है। अतः उदाहरणार्थ, सिमेटिक और भारतीय परम्पराएं एक दूसरे की सम्पूरक हैं क्योंकि ये परम आध्यात्मिक सत् के सन्दर्भ में सक्रिय और अपरिवर्तनीय

पक्ष, जिससे वे स्वयं को सम्बन्धित करती हैं, पर बल देती हैं। अपनी दोस्ताना प्रतिक्रियाओं में एक दूसरे से सीखते हुए "संसृत आध्यात्मिकता" (Convergent spirituality) उत्पन्न हो सकती है जिसे पहले से ही जाना नहीं जा सकता है।

उग्र विविधताः जान कोब धर्मों के मध्य कोई महत्वपूर्ण सम्बन्ध होना स्वीकार नहीं करते हैं। प्रत्येक परम्परा विशिष्ट और स्वतन्त्र है। विभिन्न धर्मों को जोड़ने जैसा कुछ नहीं होता है न केवल बाह्य अभिव्यक्तियां बल्कि धर्म का परम तत्व भी भिन्न होता है। उदाहरण के लिए, ऐकेश्वरवादी धर्मों द्वारा स्वीकृत व्यक्तित्व सम्पन्न ईश्वर बौद्ध धर्म स्वीकृत प्रतिरक्षण परिवर्तनीय, विश्व की अन्तः निर्भर प्रक्रिया (प्रतीत्यसमुत्पाद) से पूर्णतः भिन्न है। इस विचार के अनुसार, प्रत्येक धर्म विशिष्ट है, धर्मों के मध्य कोई महत्वपूर्ण एकता नहीं है। यदि कोई एकता है तो वह साझे नामों की ओर नैतिक संहिताओं, मान्यताओं और कर्मकाण्डों जैसी बाह्य विशेषताओं की। यद्यपि इनकी विषय वस्तु भिन्न है। अतः धर्मों के मध्य उग्र विविधता है। साझे केन्द्रिय पक्ष की खोज निरर्थक है। इस विचार के सम्मुख कठिनाई यह है कि यह इस प्रश्न का उत्तर नहीं दे पाता कि क्यों विभिन्न विश्वासों का तन्त्र धर्म कहलाते हैं। किसी वर्ग के विशेषों को आपस में किसी न किसी प्रकार से सम्बन्धित अवश्य होना चाहिए। उनके मध्य में कुछ तो केन्द्रिय साझा तत्व होना चाहिए।

बोध प्रश्न II

ध्यातव्य : क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का उपयोग कीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कीजिए।

1. धर्मों के मध्य सम्बन्ध स्थापित करने के दो महत्वपूर्ण ढंग कौन से है?

....

....

....

……………………………………………………………………………………………………

11.3.3 विरोधाभासी सत्यता–दावों का परिहार

धार्मिक बहुलतावाद के प्रति तीसरा दार्शनिक प्रतिवाद विभिन्न धर्मों के विरोधाभासी सत्यता–दावे की समस्या को हल करना है। प्रस्तुत हल दो धाराओं में आगे बढ़ता है। प्रथम धारा इस दिशा में आगे बढ़ती है कि क्या विभिन्न धर्मों के दावों को तार्किक ढंग से वैध ठहराया जा सकता है। यह प्रत्येक विरोधी दावे के पक्ष तथा विपक्ष में प्रमाणों की खोज इस विश्वास के साथ करता है कि ऐसे प्रमाणों की सहायता से असहमतियों को दूर किया जा सकता है। दूसरी धारा विरोधी सत्य दावों सम्बन्धी समस्या को धर्मों के मध्य सम्बन्ध सम्बन्धित सिद्धान्तों के आधार पर हल करने का प्रयास करती है।

11.3.3.1 धार्मिक संघर्षों को साक्ष्यों की सहायता से समाप्त करना

काण्ट–पूर्व दर्शन, विशेषकर देववादी दर्शन, यह विश्वास करता था कि केन्द्रिय धार्मिक दावे जैसे कि ईश्वर में विश्वास, आत्मा की अमरता आदि तार्किक ढंग से सिद्ध किए जा सकते हैं। किन्तु ह्यूम एवं काण्ट के पश्चात यह एक आम सहमति बनी कि परम्परागत) ईश्वरवादी तर्क धार्मिक दावों को सिद्ध नहीं कर सकते यद्यपि कुछ प्रभावी दार्शनिक इस निष्कर्ष को अस्वीकार करते हैं। वस्तुतः धार्मिक दावों को वैध ठहराने के दावों को छोड़ा नहीं गया तर्कबुद्धि के स्थान पर अनुभवों को धार्मिक ज्ञान का वैध स्रोत स्वीकार कर लिया गया। तर्क यह था कि धार्मिक व्यक्ति विशिष्ट धार्मिक अनुभवों, रहस्यवादियों के परम सत् के प्रत्यक्ष अनुभव सहित, के होने का दावा करते हैं। वे ईश्वर से ऐक्य का अनुभव करते हैं; पूजा के समय दैवीय उपस्थिति का अनुभव करते हैं, रचनाकार के ऊपर पूर्ण निर्भरता सम्बन्धी ईश्वर की अप्रत्यक्ष चेतना का अनुभव करते हैं और दैवीय उपस्थिति और क्रिया का प्रकृति की सुन्दरता और उदात्त के द्वारा अन्तःकरण के दावे के द्वारा मानव प्रेम के मूल महत्व के द्वारा जन्म और मृत्यु की अनुभूति के द्वारा तथा अनेक प्रकार की व्यक्तिगत एवं ऐतिहासिक घटनाओं के द्वारा अनुभव करते हैं। क्या अनुभवों को असहमतियों को समाप्त करने के अच्छे प्रमाण नहीं माने जा सकते?

पुरातन क्षमायाचक धार्मिक अनुभवों को ईश्वर और आध्यामिक सत्ताओं के ज्ञान का स्रोत मानता है। इस विचार के प्रति आपत्ति यह हो सकती है कि ये अनुभव शुद्ध रूप से मानवीय कल्पना का परिणाम हो सकते हैं। अतः धार्मिक अनुभव मूलतः अस्पष्ट ही होते हैं।

इस बिन्दु पर "तार्किक विश्वसनीयता का सिद्धान्त" प्रस्तुत किया जाता है। इसके अनुसार हमारे लिए अपने अनुभवों का वैध ज्ञान के स्रोत के रूप में स्वीकार करना तब तक तार्किक है जब तक कि हमारे पास उन पर अविश्वास करने का कोई पर्याप्त तर्क न हो। हम इस सिद्धान्त को हमारे दैनिक जीवन के भौतिक अनुभवों पर लागू करते हैं। हमें इन्द्रिय सम्वेदनों पर विश्वास करने के लिए किसी तर्क की आवश्यकता नहीं होती बल्कि अविश्वास करने के लिए तर्क की आवश्यकता होती है। यही सिद्धान्त धार्मिक अनुभवों के सन्दर्भ में भी अपनाया जाना चाहिए। वस्तुतः यह अभौतिक दैवीय सत् की चेतना है और यदि हमारे पास इसमें अविश्वास करने का तर्क न हो तो हमें इसे स्वीकार करना चाहिए।

धार्मिक अनुभवों को इन्द्रिय अनुभवों के समान समझने पर दो आपत्तियां उठाई जाती हैं। प्रथम, जहां इन्द्रिय अनुभाव सार्वभौमिक और बाध्यकारी होते हैं वहीं धार्मिक अनुभव वैकल्पिक और कुछ व्यक्तियों तक ही सीमित होते हैं। अतः जहां इन्द्रिय अनुभव किसी के भी द्वारा पुष्ट किए जा सकते हैं वहीं धार्मिक अनुभव इस प्रकार पुष्ट नहीं किए जा सकते। दूसरी, जहां इन्द्रिय अनुभव भौतिक जगत के सार्वभौमिक रूप से स्वीकृत वर्णन प्रस्तुत करते हैं वहीं धार्मिक अनुभव दैवीय तत्व के विभिन्न एवं प्रतिस्पर्धी वर्णन प्रस्तुत करते हैं इन्हीं कारणों से विद्वान धार्मिक अनुभव एवं इन्द्रिय अनुभवों की समानता का खण्डन करते हैं। फलतः तार्किक विश्वसनीयत का सिद्धान्त धार्मिक अनुभवों पर लागू नहीं होता है।

वैध ज्ञान के स्रोत के रूप में धार्मिक अनुभवों की विश्वसनीयता के प्रति एक सकारात्मक तर्क इस अवलोकन से प्राप्त होता है कि यह विषय के भिन्न तथा प्रतिस्पर्धी वर्धन प्रस्तुत करता है। हिन्दू, मुस्लमान, ईसाई और बौद्ध और अन्य धार्मिक समूह यह दावा करते हैं कि उनके अप्रश्नीय विश्वास उनके धार्मिक अनुभवों के अनुरूप हैं। यदि इनके दावे सत्य है तो प्रश्न है कि किस के दावे सत्य माने जाए? कौन सा धर्म सत्य है? चूँकि वे सभी अपने–अपने दावों की

सिद्धि में अपने–अपने धार्मिक अनुभवों को प्रस्तुत करते हैं इसलिए वे सभी समान रूप से सत्य होने चाहिए फिर चाहे वे एक दूसरे से असहमत ही क्यों न हों। अतः धार्मिक विविधता सम्बन्धी तथ्य और मन्तान्तरों को समाप्त करने में धार्मिक अनुभव की अयोग्यता इस तथ्य का खण्डन करती है कि सत्य विश्वास उत्पन्न करने में धार्मिक अनुभव इन्द्रिय अनुभव के समान हैं और धार्मिक अनुभवों को धार्मिक विरोधों को समाप्त करने में उपयोग में लाया जा सकता है।

11.3.3.2 धर्म–सिद्धान्तों की सहायता से धार्मिक विरोधों को समाप्त करना

विरोधी सत्य दावों को समाप्त करने का एक अन्य ढंग धर्मों के मध्य सम्बन्ध की विभिन्न व्याख्याओं पर आधारित है। धर्म की कुछ ऐसी व्याख्याएं प्रस्तुत की गई है जो समस्या को स्वतः ही हल कर देगी। उनमें से सबसे महत्वपूर्ण है; प्रकृतिवाद, विशिष्टतावाद, अनुभवातीत एकता का सिद्धान्त और सम्पूरकता सिद्धान्त।

प्रकृतिवादः यह धर्म के अस्तित्व को नकार कर समस्या को सीधे से हल करने का मुख्य प्रयास करता है। यह सभी धार्मिक दावों को असत्य, मानवीय आशा, भय, विचारों के विश्व के ऊपर भ्रामक आरोपण का परिणाम मानता है। ज्ञान के सभी धार्मिक दावे असत्य हैं अतः उनके मध्य के संघर्ष कोई वास्तविक समस्या उत्पन्न नहीं करते। इस विचार के सम्मुख कठिनाई यह है कि यह किसी धर्म को गम्भीरता से नहीं लेता और इसलिए समस्या का कोई सकारात्मक हल प्रस्तुत नहीं करता। यह समस्या को छदम समस्या घोषित करता है। फलतः विद्वान इस दृष्टि से असहमति प्रदर्शित करते हैं और समस्या के समाधान पर जोर देते हैं; धर्म को गम्भीरता से लेने वाले कहते हैं। धार्मिक विश्वास पूर्णतः मानवीय कल्पना नहीं हैं। वे यह मानते हैं कि धार्मिक विश्वास में कल्पनात्मक प्रेक्षण निहित होते हैं किन्तु ये अनुभवातीत यथार्थ के अनुभवों की व्याख्या करने का प्रयास करते हैं। इस विचार की स्वीकृति से विरोधी सत्य दावों की समस्या वास्तविक रूप ले लेती है और धर्म की अनेक धार्मिक व्याख्याएं इसके हल के लिए प्रस्तुत की जाती हं और माना जाता है कि प्रत्येक व्याख्या अपने ढंग से समस्या का हल करती

विशिष्टतावादः प्रकृतिवाद के विपरीत, विशिष्टतावाद इस संघर्ष को वास्तविक मानता है। इसके समाधान के लिए वह स्पष्ट रूप से यह कहता है कि संघर्ष की स्थिति में अपने धर्म सम्मत विश्वास को स्वीकार करना चाहिए और अन्य को असत्य मान कर छोड़ देना चाहिए। यह विचार एक धर्म को सत्य मानता है और शेष को असत्य कह कर नकार देता है। यह अपने धर्म की अपेक्षा अन्य धर्म को असत्य कह कर उनसे असहमति प्रकट करता है।

इस विचार में किसी धर्म का पक्ष उसे सत्य भण्डार मानकर लिया जाता है, और अन्य को असत्य के प्रचारक घोषित कर नकार दिया जाता है, विशेषरूप से उन धर्मों को स्वयं के धर्म से असहमत हैं। किन्तु, किसी एक्धर्म के पक्ष लेने के तरीके से "संदेह का निर्वचनशास्त्र' प्रदीप्त होता है। बहुधा किसी धर्म का पक्ष लेना जन्म, पर निर्भर होता है, न कि बौद्धिक स्वीकरण। इस प्रकार किसी धर्म को एकमात्र सत्य धर्म मानना अबौद्धिक स्वैच्छिकता है। और यदि यह स्वीकारा जाये कि मुक्ति एवं शाश्वत जीवन अपने स्वयं के धर्म को सत्य स्वीकारने पर निर्भर करती है, तब यह अनुचित प्रतीत होता है कि यह शाश्वत जीवन और मुक्ति देने वाला सत्य किसी के समुदाय को ज्ञात है, जिसमें केवल कुछ लोगों को ही जन्म लेने का सौभाग्य प्राप्त है।

धर्मों की अनुभवातीत एकताः इस मत को मानने वाले धर्मों के सत्य दावों के मध्य विरोध को अवास्तविक मानते हैं। असहमति धर्म के गैर–मौलिक बाह्य तत्वों से सम्बन्धित हैः सहमति होते ही विरोध समाप्त हो जाते हैं। असहमति दूर होने पर बहुलतावादी दृष्टिकोण धर्मों के साझे केन्द्रिय पक्ष को खोजने का प्रयास करते हैं। यह प्रयास तीन सुझाव लेकर आता है।

प्रथम, यह रहस्यवादियों के गुप्त धर्म और आस्तिकों के बड़े समूह के बाह्य स्पष्ट धर्म में अन्तर करता है और दावा किया जाता है कि प्रथम, अपने अन्तर्तम रूप में विभिन्न धर्मों में समान है जबकि द्वितीय सांस्कृतिक तत्वों के कारण भिन्न है और अनेक बिन्दुओं पर परस्पर प्रतिस्पर्धी है। धार्मिक असहमति रहस्यवादियों के गुप्त धर्म पर ध्यान केन्द्रित करके की जा सकती है।

यह विचार दो कठिनाईयों लेकर आता है। प्रथम, यह विभिन्न धार्मिक मान्यताओं और वर्णन एक जीवन–दंगों को सापेक्षिक बना देता है। दूसरे, यह दावा कि रहस्यवादियों का गूढ़ धर्म

विभिन्न धर्मों में समान होता है तथ्यजनक नहीं है। वास्तव में, रहस्यवादियों दूसरे से काफी भिन्न होते हैं। जहां कुछ रहस्यवादी व्यक्तित्व सम्पन्न दैवीय सत की बात करते हैं तो कुछ अव्यक्तित्वसम्पन्न सत् की तथा कुछ अन्य आत्म के विलोम होने अथवा वैश्विक आत्म में समाहित होने, अथवा आनन्दपूर्ण शून्यता का दावा करते हैं। अतः गूढ़ धर्म के स्तर पर भी कोई सहमति नहीं होती। फलतः विरोधी सत्य दावों की समस्या अनुसलझी ही रहती है।

द्वितीय सुझाव केन्द्रिय रहस्यात्मक अनुभव और इस अनुभव की सूचना के मध्य अन्तर पर आधारित है। इसके अनुसार, सभी धर्मों के रहस्यवादी समान अनुभव को प्राप्त करते हैं। किन्तु इसका वर्णन में प्रत्येक अपने धर्म के प्रत्ययों और विचारों के अनुसार करता है। रहस्यवादियों के वर्णनों में अन्तर सामान्य जनों की धर्मशास्त्रीय व्याख्याओं, अवर्णनीय अनुभवों के कारण होता है।

यहां इस बात को लेकर विवाद है कि रहस्यवादी दैवीय सत् की प्रत्यक्ष चेतना प्राप्त करते हैं कि नहीं, अथवा क्या उनके अनुभव उनके अपने धर्म की विचार परम्परा से प्रभावित होते हैं या नहीं? क्या रहस्यवादियों के कथनों में अन्तर किन्हीं साझी असत्यापनीय व्याख्याओं के कारण है अथवा क्या हमें यह मानना चाहिए कि कोई चेतना पूर्व व्याख्यात्मक क्रिया चेतन अनुभव के निर्माण में संलिप्त होती है ताकि वास्तविक रहस्यवादी अनुभवों लक्षणात्मक रूप से भिन्न हों? यदि रहस्यवादियों के उदगारों में अन्तर वास्तविक रूप से भिन्न अनुभवों का परिणाम हो तो किसी साझे रहस्यवादी अनुभव की खोज, धार्मिक विश्वासों और व्यवहारों की बहुरूपता के पीछे एकीकृत सिद्धान्त की खोज शह–मात का खेल सिद्ध होती है।

तीसरे प्रकार का सुझाव काण्ट के वस्तु–सत (दैवीय अथवा परम्) और आभासिक सत् (मानव ग्राही एवं अनुभूत सत्) के मध्य विभाजन पर आधारित है। काण्ट के प्रकार की परिकल्पना विरोधी सत्य दावों की समस्या से सामना यह प्रस्तावित करने पर होता है कि ये दावे वस्तुतः इसलिए विरोधी नहीं हैं कि ये विभिन्न मानव आस्था वाले समुदायों, प्रत्येक अपने अवधारणात्मक आध्यात्मिक व्यवहारों, जीवन के ढंगों, मिथकों एवं कहानियों, ऐतिहासिक स्मृतियों के ढांचे में संचालित की सत् की विभिन्न अभिव्यक्तियां हैं। इस परिकल्पना के

अनुसार, सत् एक हैं। मतान्तर इस एक सत् के विभिन्न रूपों में अभिव्यक्त होने के कारण है। इस परिकल्पना से सम्बन्धित एक महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि क्या दैवीय सत् सम्बन्धी किसी मानव प्रत्यक्ष के लिए विभिन्न धार्मिक परम्पराओं के विशिष्ट विश्वासों को परम् सत् से निगमित करना प्रत्येक व्यक्ति की सत्य को समझ से विरोध उत्पन्न नहीं करता।

परम सत् की बहुलताः मत भिन्नता के कारण के रूप में एक परत् सत् को प्रस्तुत करना निरीक्षण का विषय रहा है। क्या रहस्यवादियों के अनुभवों में अन्तर केवल एक परम सत् की विभिन्न रूपों में अभिव्यक्ति का परिणाम है अथवा क्या यह विभिन्न परम सतों के अस्तित्व के कारण हैं। यदि अन्तर विभिन्न परम् सतों का परिणाम है तब यह व्याख्या करना आसान है कि क्यों धार्मिक दावों में विरोध होता है। विभिन्न धर्मों के दावों में इसलिए सहमति नहीं होती क्योंकि वे विभिन्न विषयों और अनुभवों का वर्णन करते हैं। यहां आलोचनात्मक प्रश्न विभिन्न परम् सतों के मध्य सम्बन्ध को लेकर उत्पन्न होता है।

सम्पूरकता सिद्धान्त : इस सिद्धान्त के अनुसार, परम् सत अपने सम्पूरक पक्ष को विभिन्न विश्व के धर्मों के रूप में उद्घाटित करता है। असहमति इसलिए होती है क्योंकि कोई भी धर्म सम्पूर्ण सत्य धारण नहीं करता है। तब यह दावा किया जाता है कि अपनी मित्रवत अन्तःक्रिया के द्वारा प्रत्येक धर्म को दूसरे से सीखने के लिए तत्पर रहने से एक सम्पूर्ण चित्र उभर कर सामने आएगा और विरोध समाप्त हो जाएंगे। प्रश्न यहां यह है कि क्या धार्मिक सत्य एक सत् की विभिन्न अभिव्यक्तियां हैं अथवा वे विभिन्न परम् सतों के वर्णन है।

बोध प्रश्न III

ध्यातव्यः क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का उपयोग कीजिए।

(ख) इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तरों का मिलान कीजिए।

1. धार्मिक अनुभव को इन्द्रिय–अनुभव के समतुल्य मानने के विरुद्ध क्या मुख्य आपत्तियां हैं?

....

....

....

....

11.4 धार्मिक बहुलतावाद के प्रति व्यावहारिक प्रतिक्रिया

हम चाहे जैसे भी समझे किन्तु यह सत्य है कि हमें धार्मिक विविधता वाले विश्व में ही रहना है। इसलिए, व्यावहारिक प्रश्न यह है कि हम अन्य धर्मों को मानने वाले व्यक्तियों के साथ कैसा व्यवहार करें। इसके लिए तीन सुझाव दिए गए हैं, धार्मिक सहिष्णुता, विविधिता के प्रति प्रशंसा भाव, और धार्मिक सम्वाद।

i) धार्मिक सहिष्णुता

सहिष्णुता मुख्यतः असहमति के साथ सामजस्य बैठाना है। अतः यह प्रभावित करने वाली वस्तुओं के प्रति अभिन्नता से भिन्न है और विभिन्नता से भिन्न है और विभिन्नता को खुले मन से स्वीकार करना नहीं है। यह अपनी नापसन्द की वस्तुओं को बल अथवा प्रतिरोध से परिवर्तन करने की इच्छा का त्याग है। अतः यह असहमति योग्य की अनिवार्यता से छुटकारा पाना नहीं है। अन्य के विचारों तथा क्रियाओं के प्रति सहिष्णु होना दूसरे के मन को परिवर्तित करने का प्रयास करना उस सीमा तक एक दूसरे के समगामी है जहां तक व्यक्ति तार्किक रूप से समझाने अथवा सम्भव भावनात्मक अनुमोदन न कि सीधी धमकी अथवा सूक्ष्म मानसिक सम्मोहन का सहारा लेता है।

धार्मिक सहिष्णुता सामान्यतः सहिष्णुता का एक पक्ष है; यह असहमतियोग्य धार्मिक भिन्नताओं जो कि या जो अभिव्यक्त होती हैं या जिनके अनुसार क्रिया की जाती है, के साथ सामजस्य बैठाना है। यह धर्मनिरपेक्षता अथवा धार्मिक समर्पण की समाप्ति नहीं है। यह बहुलतावादी, जो कि केन्द्रिय धार्मिक मुद्दों में सहमति प्राप्त करने का प्रयास करता है अथवा अन्य धार्मिक विश्वासों को साधारण समान उद्देश्यों के रूप में देखता है, से भी भिन्न है। हम यह विश्वास

कर सकते हैं कि किसी महान और पवित्र महत्व के मुद्दे पर हम स्पष्ट रूप से सही है और अन्य गलत, और फिर भी हम उनके विश्वासों और व्यवहारों को बलपूर्वक या प्रतिरोध में परिवर्तितत करने का प्रयास नहीं करते हैं। दार्शनिकों ने सहिष्णुता के लिए अनेक तर्क प्रस्तुत किए है। लॉक, उपयोगितावादी दृष्टि से कहते हैं कि नागरिक शन्ति के लिए सहिष्णुता आवश्यक है। फिर बौद्धिक आधार से वह यह तर्क करते हैं कि अन्यों के धार्मिक विश्वासों अथवा मान्यताओं को बलपूर्वक परिवर्तित करना "पूर्णतः" धृष्टता है क्योंकि मैं उस धर्म से शन्ति प्राप्त नहीं कर सकता जिसमें मेरा कोई विश्वास नहीं है, और न ही मैं उस पूजा से मोक्ष प्राप्त कर सकता जिसे मैं अनुचित मानता हूँ नास्तिक के लिए अन्य व्यक्ति के व्यवहार को बाहय रूप से गलत कहना निरर्थक है। केवल आस्था, आन्तरिक गम्भीरता, ही वह वस्तु है जो ईश्वर की सहमति से संरक्षित होती है।

दूसरी ओर मिल, सहिष्णुता के पक्ष में तर्क व्यक्तिगत स्वतन्त्रता के आधार पर करते हैं। अपनी पुस्तक ऑन लिबर्टी में यह देखते हुए कि असहिष्णुता मानव का स्वभाव है वह अपने एक बहुत साधारण सिद्धान्त को प्रतिपादित करते हैं किसी भी व्यक्ति को अपनी सुरक्षा को छोड़कर कभी भी किसी व्यक्ति की स्वतन्त्रता में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। इस सिद्धान्त को व्यक्ति के सम्मान और व्यक्ति के अन्तःकरण तथा स्वायत्ता के साथ जोड़कर देखने में हमें धार्मिक व्यवहारों के प्रति पूर्ण सहिष्णुता प्रतिवादित किन्तु प्राकृतिक राज्य में विभिन्न धर्मों के शान्तिपूर्ण सह अस्तित्व का शास्त्रीय उदारवादी प्रकरण प्राप्त होता है।

ii) विविधता को बढ़ावा देने वाली प्रवृत्तियों की प्रशंसा एवं प्रोत्साहन

धार्मिक सहिष्णुता के सम्बन्ध में ऊपर प्रस्तुत तर्क को मिल के अन्य विचार, विविधता की सकारात्मक रूप से प्रशंसा करना और बढ़ावा देना से पृथक किया जाना चाहिए। लॉकबहुलता के बहुत बड़े प्रशंसक नहीं थे, उन्होंने केवल इसे बढ़ावा नहीं दिये जाने का विरोध किया। व्यक्ति आगे बढ़कर असहमतियोग्य व्यवहारों की वास्तव में प्रशंसा करने और बढ़ावा देने के पक्ष में तर्क कर सकता है। अतः कोई मालिक ऐसी कार्य–सारणी तैयार कर सकता है जिसमें वह अपने श्रमिकों की असहमतिपूर्ण धार्मिक व्यवहारों को सम्मिलित कर सकता है। मिल तथा अन्य

विद्वान तर्क करते हैं कि किसी भी व्यक्ति अथवा समाज के लिए यह बुद्धिमतापूर्ण है कि उसे अपने विरोधी विचारों को बढ़ावा देना चाहिए क्योंकि इससे वे अपनी गलतियों में सुधार कर सकते हैं और श्रेष्ठ तक तथा श्रेष्ठ सत्य को प्राप्त कर सकते हैं। प्रजातान्त्रिक सरकारों को न केवल आलोचनाओं को सहन करना चाहिए। बल्कि ऐसे संस्थानों जैसे कि विरोधी दल और स्वतन्त्र मिडिया को स्थापित करना चाहिए ताकि वैकल्पिक एवं प्रायः आलोचनात्मक विचारों का प्रसार हो सके। आस्तिकों को भी अपनी धार्मिक पुस्तकों को आलोचना के लिए खुला छोड़ना चाहिए और ऐसी व्यवस्था बनानी चाहिए जो वैकल्पिक विचारों को संरक्षित और प्रसारित कर सके। इस विचार को इस बात से प्रेरणा मिल सकती है कि मानव का ईश्वर का ज्ञान मूलतः सीमित और असत्य होता है। यह विचार एक धर्मशास्त्रीय आधार और ज्ञानमीमांसीय विनम्रता लेकर आता है। जो न केवल सहिष्णुता लेकर आता है बल्कि धर्म विरोधी विचारों को अभिव्यक्ति करने की भी स्वतन्त्रता प्रदान करता है क्योंकि बाद वाली स्थिति व्यक्ति के विश्वासों को एक नई दृष्टि प्रदान कर सकती है। यह विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है कि ऐसे सहयोग को बढ़ावा देने के लिए व्यक्ति को अनिवार्य रूप से यह स्वीकार करना चाहिए कि अन्य भी किसी न किसी रूप में सत्य हैं। अपने विरोधियों को स्वीकार करने का ऐसा खुलापन अन्यों को असहमतिपूर्ण रूप से गलत होने के विचार के संगत है।

iii) अंतःधार्मिक सम्वाद

धार्मिक विविधता को अंतःधार्मिक सम्वाद से भी संरक्षित किया जा सकता है। अंतःधार्मिक सम्वाद शब्द व्यक्तिगत और संस्थानिक स्तर पर आपसी समझ और सहयोग तथा यदि सम्भव हो तो विश्वास सम्बन्धी सामूहिक आधार को बढ़ावा देने के उद्देश्य से विभिन्न धर्मों के व्यक्तियों और उनके आध्यात्मिक तथा व्याख्यात्मक विश्वासों के मध्य सहयोग और सकारात्मक अन्तः क्रिया को सम्भव बनाने के लिए संचालित प्रक्रिया को निर्देशित करता है। यह विभिन्न आस्थाओं के मध्य की समानताओं पर ध्यान केन्द्रित करने, मूल्यों को समझने और विश्व के प्रति समर्पण करने के भाव से सम्भव हो सकता है। यह समन्वय से इस अर्थ में भिन्न है कि सम्वाद में प्राय अन्य धर्मों को स्वीकार करने के उद्देश्य से विभिन्न धर्मों के मध्य के अन्तरों से सम्बन्धी समझ को प्रसारित करता है। जबकि समन्वय में विभिन्न विश्वास व्यवस्थाओं के

सम्मिश्रण से नये विश्वासों का संश्लेषण किया जाता है। सम्वाद में विभिन्न विश्वास व्यवस्थाओं के सम्मिश्रण का प्रयास नहीं किया जाता बल्कि विभिन्न धर्मों के व्यक्तियों के मध्य, परस्पर समझ और सहयोग को बढ़ावा देने के उद्देश्य से सकारात्मक अन्तक्रिया पर बल दिया जाता है।

सम्वाद के पक्ष में मुख्य तर्क यह है कि धर्मों के मध्य गहन समझ उत्पन्न करने के अतिरिक्त यह धर्मों के आपसी संघर्षो को समाप्त करने और एक श्रेष्ठ विश्व के निर्माण के उद्देश्य से उनके मध्य सहयोग को बढ़ावा देने का भी प्रयास करता है। सम्वाद से समस्या का हल इस परिकल्पना से सम्भव होता है कि सभी आध्यात्मिक एवं धार्मिक परम्पराएं ऐसे मूल्यों का स्रोत हैं जो सभी के लिए गारिमापूर्ण जीवन को सम्भव बनाता है। अर्थात यदि हम अपनी आस्था के अनुसार गरिमापूर्ण जीवन जीना चाहते हैं तो इन परम्पराओं को हमें सामूहिक रूप से खोजना होगा।

11.5 पंथनिरपेक्षतावाद

विस्तृत अर्थ में, पंथनिरपेक्षतावाद धार्मिक प्रभुत्व और धार्मिक कट्टरवाद/आधारभूतवाद और धर्म अथवा धार्मिक विश्वास पर आधारित बहिष्करण का प्रतिरोध है। इस कथानक का अनुसरण करते हुए, हम कह सकते हैं कि पंथनिरपेक्षतावाद का सामान्य लक्ष्य सामाजिक और राजनैतिक संस्थाओं को धार्मिक एकाधिकारवाद से मुक्ति प्रदान करना एवं किसी व्यक्ति को किसी धर्म अथवा धार्मिक विश्वास को चुनने या न चुनने की आज़ादी का आश्वासन देना है। हम एक ऐसे पंथनिरपेक्षतावाद के बारे में सोच सकते हैं, जो या तो 'पृथक्करण की दीवार' होने की, या फिर 'पृथक्करण की दीवार न होने अथवा पृथक्करण की आंशिक दीवार' होने की पूर्वमान्यता रखता है।

'सेक्युलरिज्म (पंथनिरपेक्षतावाद)' शब्द लैटिन शब्द सेकुलम से निष्पन्न है, जिसका अर्थ होता है 'यह युग', 'यह समय' अथवा 'यह विश्व'। (टी. एन. मदान, मॉडर्न मिथ्स, लॉक्ड माइन्ड्सर, पृ. 6)। विश्व की निष्पन्न समझ के आधार पर, हम यह कह सकते हैं कि पंथनिरपेक्षतावाद 'इस विश्व' की सत्ता में विश्वास एवं 'अन्य विश्व' (उदाहरणस्वरूप– दैवीय विश्व) की सत्ता के

सन्दर्भ में 'इस दुनिया' की सत्ता को कमतर मानने वाले विश्वास का अस्वीकरण है। यह कहते हुए कि पंथनिरपेक्षतावाद प्रत्येक मानवीय अस्तित्व को समान अस्तित्व मानता है, अपनी पूर्व की समझ का विस्तार कर सकते हैं। अमेरिकी दार्शनिक रोनल्ड डॉर्किन 'समान व्यवहार' एवं 'सभी के साथ समान की तरह व्यवहार' में भेद करते हैं। कभी–कभी सभी के साथ समान व्यवहार के लिए असमान व्यवहार आवश्यक होता है। शेर, मछली, और गिलहरी के मध्य एक ऐसी प्रतियोगिता का आयोजन जिसमें कम समय में एक पेड़ पर चढ़ाई करनी होती है, अन्याय ही होगा।

हम एक पंथनिरपेक्ष राज्य की चारित्रिक विशेषताओं को निम्नलिखित बिन्दुओं के माध्यम से प्रस्तुत कर सकते हैंरू

1. धर्म की अ–स्थापना का सिद्धान्त
2. समुदायों के मध्य शान्ति की स्थापना का सिद्धान्त
3. सभी धर्मों एवं धार्मिक समुदायों के लिए धार्मिक स्वतन्त्रता
4. सभी धर्मों एवं धार्मिक समुदायों के लिए बिना किसी भेदभाव के धार्मिक स्वतन्त्रता
5. किसी भी धार्मिक विश्वास या धर्म को चुनने और किसी भी धार्मिक विश्वास को या धर्म को न चुनने की स्वतन्त्रता
6. राज्य प्रदत्त परिसम्पत्ति या सहायता में धर्म के आधार पर कोई भी भेदभाव नहीं
7. शैक्षिक और स्वास्थ्य संस्थानों में धर्म के आधार पर कोई भी भेदभाव नहीं

(राजीव भार्गव, 'पंथनिरपेक्षतावाद', *पॉलिटिकल थ्योरीः एन इन्ट्रोडक्शन*)

सामान्यतौर पर, पंथनिरपेक्षतावाद को धार्मिक संस्था एवं राजनैतिक संस्था के मध्य अलगाव के सिद्धान्त के तौर पर वणित किया जाता है। ऐतिहासिकरूप से, इसका प्रादुर्भाव ईश्वर एवं भक्त के मध्य चर्च या पुरोहित की मध्यस्थता के प्रतिरोध के रूप में हुआ। यह भी माना जाता है कि पंथनिरपेक्षतावाद का प्रादुर्भाव चर्च और राज्य के मध्य संघर्ष क सुलझाने के लिए हुआ

था। चर्च और राज्य के मध्य कार्य—विभाजन इस तरह किया गया कि चर्च धार्मिक मामलों में और राज्य राजनैतिक मामलों में कार्य करेगा, और कोई भी अन्य के क्षेत्र में दखल नहीं देगा। इस प्रकार, यह कहा जा सकता है कि राज्य धार्मिक मामलों में तटस्थ रहेगा। राज्य न तो किसी धर्म या धार्मिक विश्वासों, कृत्यों, प्रथाओं इत्यादि को प्रोत्साहन देना, और न ही हस्तक्षेप करेगा। सभी लोग उनके धर्म या धार्मिक विश्वासों की अपेक्षा के राज्य के समक्ष समान स्वीकारे जायेंगे।

पंथनिरपेक्षतावाद की यह समझ इस मान्यता पर आधारित है कि धर्म एक निजी मसला है। यह ईश्वर एवं ईश्वर के भक्त; धार्मिक संस्था एवं उस धार्मिक संस्था द्वारा उपदेशित धार्मिक विश्वास को मानने वाले व्यक्ति के मध्य का निजी मसला है। हम इस मान्यता से यह भी निगमित कर सकते हैं कि निजी मसला व्यक्ति के सार्वजनिक मसले को प्रभावित नहीं करेगा, और निजी एवं सार्वजनिक के मध्य इस विभाजन के आधार पर, धार्मिक मामलों और राजनैतिक मामलों में विभाजन सम्भव होगा।

लेकिन क्या वास्तव में यह सम्भव है कि मानवीय जीवन का एक आयाम उसके दूसरे अन्य आयाम को प्रभावित नहीं करता है? क्या यह वास्तविक तौर पर सम्भव है कि व्यक्ति अपने निजी मसले को सार्वजनिक मसले में अभिव्यक्त नहीं करता है? हम अपने स्वयं के जीवन में निजी एवं सार्वजनिक मसले के मध्य विभाजन या अलगाव की उपादेयता/युक्तिसंगतता को सोच सकते हैं। क्या हमारे जीवन में निजी एवं सार्वजिक मसलों के मध्य एक स्पष्ट विभाजन रेखा खींचना सम्भव है?

इन प्रश्नों पर प्रतिबिम्बन पंथनिरपेक्षतावाद की एक दूसरी कहानी; एक दूसरी समझ का रास्ता खोलती है। यह समझ बताती है कि राज्य और धार्मिक संस्था के मध्य पूर्ण अलगाव नहीं है, अथवा हम यह भी कह सकते हैं कि राज्य धर्म—निरपेक्ष नहीं है। यद्यपि राह्य का कोई धर्म या धार्मिक विश्वास नहीं है, लेकिन राज्य किसी भी धार्मिक संस्था की सहायता कर सकता है और उन धार्मिक विश्वासों में हस्तक्षेप कर सकता है, जिनसे किसी व्यक्ति की स्वतन्त्रता और गरिमा

का अतिक्रमण होता है या वह खतरे में होती है, लेकिन राज्य धर्मों के मध्य पक्षपात नहीं करेगा।

कुछ विद्वान इसे पंथनिरपेक्षतावाद का वह संस्करण मानते हैं, जो भारतीय मस्तिष्क में अंकुरित/उत्पन्न हुआ है और भारतीय संविधान पंथनिरपेक्षतावाद के इस प्रकार का दस्तावेज है।

> ***आओ विचार करें –I***
>
> विचार कीजिए कि भारतीय संविधान के कौन–से अनुच्छेद पंथनिरपेक्षीय मूल्यों को प्रतिबिम्बित करते हैं।
>
> भारतीय इतिहास के उन उदाहरणों पर सोचिए जहाँ आपको पंथनिरपेक्षीय मूल्य दिखाई देते हैं।

भारतीय संविधान की उद्देशिका भारतीय संविधान के पंथनिरपेक्षता के स्वरूप का प्रतिनिधित्व करती है। यह उद्देशिका भारतीय लोकतांत्रिक राज्य के लक्ष्य को सभी नागरिकों के लिए विचारों की स्वतन्त्रता, और अवसरों की समानता के रूप में व्यक्त करती है।

उदाहरण के लिए, भारतीय संविधान का अनुच्छेद 15 (1) कहता है कि राज्य किसी व्यक्ति के साथ जाति, पंथ, लिंग या धर्म के आधार पर भेदभाव नहीं करेगा, अनुच्छेद 25 'अंतःकरण की स्वतन्त्रता एवं किसी धर्म के स्वीकरण, अनुपालन एवं प्रचार की स्वतन्त्रता' प्रतिपादित करता है। अनुच्छेद 27 कहता है कि किसी व्यक्ति को ऐसा कोई कर देने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता है जो किसी विशेष धर्म या धार्मिक विश्वास के प्रोत्साहन अथवा उसकी किसी आवश्यकता की पूर्ति के लिए उपयोग में लाया जाये।

पंथनिरपेक्षतावाद के भारतीय संस्करण की अनेक अद्वितीय विशेषताएं हैं। यहाँ हम केवल केवल दो विशेषताओं का संक्षिप्त उल्लेख करेंगे। एक है सैद्धान्तिक दूरी और दूसरी है परिस्थितिजन्य पंथनिरपेक्षता। पंथनिरपेक्षतावाद का भारतीय संस्करण प्रस्तावित करता है कि राज्य धर्म से सैद्धान्तिक दूरी बनायेगा; राज्य उन धार्मिक मामलों में हस्तक्षेप करेगा, जहाँ पंथनिरपेक्ष मूल्य, जैसे स्वतन्त्रता, गरिमा आदि पर कुठाराघात हो। धर्म भी राज्य के मामलों में हस्तक्षेप कर सकता है, यदि यह पंथनिरपेक्ष मूल्यों को सींचने या प्रोत्साहित करने में लाभकारी हो। इसके अलावा राज्य न तो किसी धर्म को प्रोत्साहित करेगा, और न ही किसी धर्म को हतोत्साहित करेगा। यह धार्मिक अल्पसंख्यकों को अपनी स्वयं की शैक्षिक संस्थाओं को

स्थापित करने की स्वतन्त्रता और धार्मिक स्वतन्त्रता का आश्वासन देता है। (द्रष्टव्य, राजीव भार्गव, 'सेक्युलरिज्म', *पॉलिटिकल थ्योरीः एक इन्ट्रोडक्शन*)।

परिस्थितिजन्य पंथनिरपेक्षता भारत के बहुमूल्य चरित्र को दर्शाती है। यह सही है कि परिस्थितिजन्य पंथनिरपेक्षता दो विचारों के मध्य संघर्ष और अस्थायी चरित्र रखती है, लेकिन यह चरित्र पुनर्विचार, पुनर्परिभाषित करने और सम्वाद का मार्ग प्रशस्त करता है।

कुछ विचारक पंथनिरपेक्षतावाद के भारतीय संस्करण की आलोचना इसके लचीलेपन के आधार पर करते हैं। वे तर्क करते हैं कि यह लचीलापन और परिस्थिति–निर्भरता राज्य और धर्म के मध्य, धर्मों के मध्य तथा व्यक्ति और धर्म के मध्य संघर्ष को सुलझाने में बाधा है।

स्पष्टरूप से, हम इस आपत्ति को प्रारम्भ में ही नकार नहीं सकते हैं, लेकिन हम यह सोच सकते हैं कि यह परिस्थिति–निर्भरता पंथनिरपेक्षता को पुनः परिभाषित करने के लिए अवकाश प्रदान करती है और यह पंथनिरपेक्षता पद के बहुस्वर (अनेक अर्थ) के अधिक संगत है। (द्रष्टव्य, टी. एन. मदन, *मॉडर्न मिथ्स, लॉक्ड माइन्ड्स*, पृ. 5)।

पंथनिरपेक्षतावाद की एक सामान्य आलोचना यह है कि यह भारतीय समाज के सन्दर्भ में उचित प्रारूप/उपाय नहीं है, क्योंकि भारत में, धार्मिक विश्वासों की बहुलता है, यहाँ अनेक धर्म हैं। आप भारतीय समाज में राज्य एवं धर्म के मध्य पृथकता की दीवार नहीं बना सकते हो। यह वैध आलोचना है, परन्तु हम अपने संविधान के पंथनिरपेक्षीय संरचना पर विचार कर सकते हैं, हम देख सकते हैं कि यह आलोचनात्मक प्रवृत्ति के साथ धर्म के प्रति सम्मान की भावना का अधिवाचन करता है। यह उन भारतीय आत्माओं का अनुसरण करता है जो अपने धर्म में सुधार का प्रयास करते हैं, क्योंकि वे अपने धर्म को प्यार करते हैं।

11.6 सारांश

वैश्वीकरण के इस दौर में धार्मिक बहुलतावाद का मुद्दा धर्म–दर्शन के लिए अति महत्वपूर्ण है। धार्मिक बहुलतावाद को परिभाषित करने के अतिरिक्त इस विषय पर चर्चा निरन्तर दो मुख्य मुद्दों धर्मों के मध्य सम्बन्ध और बहुलता के स्पष्ट तथ्य के प्रति सर्वाधिक उपयुक्त उत्तर

(दार्शनिक एवं व्यवहारिक दोनों) पर ध्यान केन्द्रित करती है। यह मुद्दा दार्शनिक परिकल्पना के लिए स्पष्ट चुनौती प्रस्तुत करता है कि ये मुद्दे आने वाले दशकों में अनिवार्यतः व्यापक रूप से चर्चा का मुख्य विषय रहेंगे।

11.7 कुंजी शब्द

धार्मिक बहुलतावाद : धार्मिक विविधता को स्वीकार करना और यह मानना कि सभी धर्म वैध है।

धार्मिक विशिष्टतावाद : अपने स्वयं के धर्म के अलावा बाकी अन्य धर्मों को असत्य मानकर खारिज़ करना।

प्रकृतिवाद : वह विचार जो प्रकृति के परे किसी आध्यात्मिक सत को नकारती है, और प्रकृति को परम सत् स्वीकारती है। यह सभी धार्मिक दावों को इस आधार पर असत्य मानती है कि ये दावे विश्व पर मानवीय आशा, भय, और आदर्शों का भ्रामक प्रक्षेपण हैं।

धार्मिक सहिष्णुता : असहमतिपूर्ण धार्मिक अन्तरों को सकारात्मक रूप से स्वीकार करना।

धर्मनिरपेक्षतावाद : धर्म को व्यक्ति का व्यक्तिगत मामला मानना और कुछमामलों में धार्मिक समर्पण को समाप्त करना।

पंथनिरपेक्षीकरण : सामूहिक जीवन में धर्म को खारिज़ करना, और चरम मामलों में धार्मिक समर्पण की पूर्ण समाप्ति।

सार्वभौमिकरण : केन्द्रिय धार्मिक मामलों पर सहमति की खोज, अथवा यह विचार कि सभी धार्मिक विश्वास किसी समान लक्ष्य की प्राप्ति के भिन्न–भिन्न रास्ते हैं।

अंतःधार्मिक सम्वाद : विभिन्न धार्मिक, आध्यात्मिक अथवा भाष्यशास्त्रीय विश्वासों वाले व्यक्तियों के मध्य व्यक्तिगत एवं समाज के स्तर पर समझ और सहयोग बनाने तथा सम्भव हो

तो विश्वास में एक साझा आधार तैयार करने के उद्देश्य से सहयोग और सकारात्मक अन्तक्रिया का संचालन करना अन्तः धार्मिक सम्वाद कहलाता है।

11.8 अन्य सहायक अध्ययन–सामग्री एवं सन्दर्भ

- बनेके, क्रिस. *बीयोंड टोलरेसनः द रिलिजियस आरिजन ऑफ अमेरिकन प्लूरेलिज्म.* न्यू यार्कः आक्सफोर्ड यूनिसर्विटी प्रेस, 2006.
- भार्गव, राजीव एण्ड अशोक आचार्य (एडि.). *पॉलिटिकल थ्योरीः एन इन्ट्रोडक्शन.* देल्हीः पीयर्सन, 2008.
- दुबे, अभय कुमार (एडि.). *बीच बहस में सेक्युलरवाद.* दिल्लीः वाणी एवं सीएसडीएस, 2005.
- गारडिस, राबर्ट. *ग्राउण्ड रूल्स फॉर ए क्रिश्चन ज्यूस डायलॉग इन द रूट एण्ड द ब्रान्च.* यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस, 1962.
- हिक, जॉन. "रिलिजियस प्लूरेलिज्म" इन *ए कम्पेनियन टु फिलोसोफी ऑफ रिलिजन,* एडि. क्विन एण्ड टेलियाफेरो. विले–ब्लैकवैल, 1997.
- हिम्मा, केनेथ इनार. "फाइंडिंग ए हाई रोडः द मोरल केस फोर साल्विफिक प्लूरेलिज्म," *इन्टरनेशनल जर्नल फोर फिलोसोफी ऑफ रिलिजन,* वोल्यू–52. न. 1, अगस्त, 2002, 1–33.
- लंगरेक, एडवर्ड "थिइज्म एण्ड टोलरेसन" इन *ए कम्पेनियन टु फिलोसॉफी ऑफ रिलिजन,* एडि, बाई क्विन्न एण्ड टेलिफेरो. विले–ब्लैकवेल, 1957, 514–22.
- मदन, टी. एन. *मॉडर्न मिथ्स, लॉक्ड माइन्ड्स.* देल्हीः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2009.
- पेन्थम, थॉमस. अन्डरस्टेन्डिंग इण्डियन सेक्युलरिज्मः लर्निंग फॉम इट्स रीसेन्ट क्रिटिक्स. इन *इण्डियन डेमोक्रेसी,* एडि. राजेन्द्र वोरा एण्ड सुहास पल्सिकर. देल्हीः सेज, 2004.

- श्रीनिवास, टी. एन. (एडि.). *द फ्युचर ऑफ सेक्युलरिज्म.* देल्हीः ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2007.
- यूको, हँस, एडि. *प्यूनल ऑफ गॉड, प्यूपलस ऑफ गॉड,* जिनेवाः डब्ल्यू सी सी पब्लिकेशन, 1996.

11.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न I

1. कुछ लोग धार्मिक बहुलता और धार्मिक बहुलतावाद के मध्य अन्तर करते हैं। वे प्रथम को धार्मिक विविधता के तथ्य के रूप में परिभाषित करते हैं और द्वितीय को इस तथ्य की पहचान और स्वीकृति के रूप में स्वीकार करते हैं।

बोध प्रश्न II

1. इस समस्या को गम्भीरता से लेने वाले धर्मों के मध्य दो भिन्न प्रकार के सम्बन्ध विशिष्टतावाद और बहुलतावाद स्वीकार करते हैं। विशिष्टतावाद अपने धर्म को छोड़कर अन्य सभी धर्मों को असत्य मान कर निरस्त कर देता है। वस्तुतः इस विचार के अनुसार केवल एक ही धर्म (उनका अपना) सत्य हो सकता है। अन्य सभी धर्मों को अपने धर्म की तुलना में वे असत्य और भ्रमित मानकर निरस्त करते हैं। दूसरी ओर, बहुलतावाद विशिष्टतावादी विचार का खण्डन करता है और यह स्वीकार करता है कि अन्य धार्मिक परम्पराएं भी सत्य एवं मोक्षदायी हो सकती हैं।

बोध प्रश्न III

1. धार्मिक अनुभवों को इन्द्रिय अनुभवों के समान समझने पर दो आपत्तियां उठाई जाती है। प्रथम, जहां इन्द्रिय अनुभाव सार्वभौमिक और बाध्यकारी होते हैं वहीं धार्मिक अनुभव वैकल्पिक और कुछ व्यक्तियों तक ही सीमित होते हैं। अतः जहां इन्द्रिय अनुभव किसी के भी द्वारा पुष्ट किए जा सकते हैं वहीं धार्मिक अनुभव इस प्रकार पुष्ट नहीं किए जा सकते। दूसरी,

जहां इन्द्रिय अनुभव भौतिक जगत के सार्वभौमिक रूप से स्वीकृत वर्णन प्रस्तुत करते हैं वहीं धार्मिक अनुभव दैवीय तत्व के विभिन्न एवं प्रतिस्पर्धी वर्णन प्रस्तुत करते हैं इन्हीं कारणों से विद्वान धार्मिक अनुभव एवं इन्द्रिय अनुभवों की समानता का खण्डन करते हैं। फलतः तार्किक विश्वसनीयता का सिद्धान्त धार्मिक अनुभवों पर लागू नहीं होता है।

वैध ज्ञान के स्रोत के रूप में धार्मिक अनुभवों की विश्वसनीयता के प्रति एक सकारात्मक तर्क इस अवलोकन से प्राप्त होता है कि यह विषय के भिन्न एवंबहुधा असंगत वर्णन प्रस्तुत करता है। हिन्दू, मुस्लमान, ईसाई और बौद्ध और अन्य धार्मिक समूह यह दावा करते हैं कि उनके अप्रश्नीय विश्वास उनके धार्मिक अनुभवों के अनुरूप हैं। यदि इनके दावे सत्य है तो प्रश्न है कि किस के दावे सत्य माने जाए? कौन सा धर्म सत्य है? चूँकि वे सभी अपने–अपने दावों की सिद्धि में अपने–अपने धार्मिक अनुभवों को प्रस्तुत करते हैं इसलिए वे सभी समान रूप से सत्य होने चाहिए फिर चाहे वे एक दूसरे से असहमत ही क्यों न हों। अतः धार्मिक विविधता सम्बन्धी तथ्य और मन्तान्तरों को समाप्त करने में धार्मिक अनुभव की अयोग्यता इस तथ्य का खण्डन करती है कि सत्य विश्वास उत्पन्न करने में धार्मिक अनुभव इन्द्रिय अनुभव के समान हैं और धार्मिक अनुभवों को धार्मिक विरोधों को समाप्त करने में उपयोग में लाया जा सकता है।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY